[2019] 4 उम. नि. प. 335

सोपानराव और एक अन्य

बनाम

सईद महमूद और अन्य

[2007 की सिविल अपील सं. 4478]

3 जुलाई, 2019

न्यायमूर्ति एन. वी. रमण, न्यायमूर्ति दीपक गुप्ता और न्यायमूर्ति (सुश्री) इंदिरा बनर्जी

संविधान, 1950 – अनुच्छेद 133 [सपठित बाम्बे पब्लिक ट्रस्ट ऐक्ट, 1950 की धारा 50ए और सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश 41 का नियम 27] – अपील – विवादित संपत्ति में हक का दावा करना – सिविल वाद – सिविल न्यायालय द्वारा न्यायनिर्णयन करना – उच्च न्यायालय द्वारा अतिरिक्त साक्ष्य ग्रहण करने से इनकार करते हुए, सिविल न्यायालय के निर्णय और आदेश को कायम रखना – आक्षेप – यदि अभिलेख पर के साक्ष्यों से यह साबित कर दिया जाता है कि विवादित मामला सिविल प्रकृति का है तो ऐसे मामलों का न्यायनिर्णय करने की सिविल न्यायालय को पूर्ण अधिकारिता होती है और विधि में विहित आधारों पर ही उसके निर्णय और आदेश को चुनौती दी जा सकती है, अन्यथा नहीं ।

वर्तमान मामले में, वर्तमान अपीलार्थियों और अन्यों ने वाद का विरोध किया । वादियों के अनुसार, सरकार द्वारा तारीख 19 अगस्त, 1978 को प्रश्नगत भूमि का कब्जा नामदेव देवोस्थान ट्रस्ट (संक्षेप में जिसे 'ट्रस्ट' कहा गया है) को अवैध तौर पर दिया गया था और यह प्रार्थना की गई कि इस भूमि का कब्जा वादियों को वापस दिया जाए । प्रतिवादियों ने कतिपय आधारों पर वाद का विरोध किया । मुख्य आधारों में से एक आधार यह उद्भूत किया था कि वाद को परिसीमा अवधि के भीतर फाइल नहीं किया गया था । यह भी दलील दी गई थी कि वाद, आवश्यक पक्षकारों के असंयोजन के कारण दूषित था और यह दलील दी

गई कि वाद भूमि अति प्राचीन काल से ट्रस्ट से संबंधित है और वाद खारिज किए जाने योग्य है । विचारण न्यायालय ने तारीख 14 अक्तूबर, 1992 के निर्णय द्वारा वादियों का वाद खारिज कर दिया था और यह अभिनिर्धारित किया था कि वाद को परिसीमा अवधि के भीतर फाइल नहीं किया गया है । यह भी अभिनिर्धारित किया था कि वाद, पक्षकारों के असंयोजन के कारण दूषित है । अंततः, विचारण न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया था कि वादी यह साबित करने में असफल रहे हैं कि वाद भूमि, इनाम भूमि है या वादी ईनामदार हैं । व्यथित होकर, वादियों ने जिला न्यायाधीश लातूर के न्यायालय में एक अपील फाइल की । जिला न्यायाधीश ने तारीख 26 नवम्बर, 1997 के निर्णय द्वारा विचारण न्यायालय के निर्णय और डिक्री को उलट दिया और यह निष्कर्ष निकाला कि भूमि मौलिक तौर पर, दरगाह नियामतुल्लाह शाह कादरी (जिसे संक्षेप में 'दरगाह' कहा गया है) से संबंधित है और वादी तथा प्रतिवादी सं. 12, वाद भूमि के नामदार हैं । यह भी अभिनिर्धारित किया कि सरकार ने गलत तौर पर वाद संपत्ति का कब्जा दिया था । यह भी अभिनिर्धारित किया कि सभी आवश्यक पक्षकार वाद में सम्मिलित थे । अंततः, प्रथम अपील न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि वादी, वाद भूमि के कब्जे की डिक्री पाने के हकदार हैं और तद्नुसार, अपील मंजूर कर ली तथा वादियों और प्रतिवादी सं. 12 के पक्ष में तथा प्रतिवादी सं. 1 से 11 और 15 के विरुद्ध वाद डिक्री कर दिया । व्यथित होकर, वर्तमान अपीलार्थियों और दो अन्यों ने बाम्बे उच्च न्यायालय के समक्ष अपील फाइल की । यह अपील, तारीख 29 मार्च, 2007 के निर्णय द्वारा खारिज कर दी गई थी । तथापि, उच्च न्यायालय ने जिला न्यायाधीश के निर्णय को इस सीमा तक उपांतरित कर दिया कि वादी और प्रतिवादी सं. 12, मुतवल्लियों के वंशज थे न कि ईनामदार थे । अतएव, यह अपील फाइल की गई । माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा अपील खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – जहां तक, हक के विवाद्यक का संबंध है, न्यायालय का मत यह है कि जिला न्यायाधीश द्वारा तथ्य के निष्कर्ष निकाले गए थे और उसकी पुष्टि उच्च न्यायालय द्वारा की गई थी । इस निष्कर्ष को

इस न्यायालय में विवादित नहीं किया जा सकता है । तथापि, अपीलार्थियों के विद्वान् काउंसेल के जोर देने पर, न्यायालय ने अभिलेखों का परिशीलन किया और यह पाया कि प्रश्नगत भूमि का कब्जा, तारीख 19 अगस्त, 1978 को ही ट्रस्ट को सौंपा गया था । यह दर्शित करने के लिए अभिलेख पर कुछ नहीं लाया गया है कि तारीख 29 जनवरी, 1973 के पूर्व भूमि, ट्रस्ट के नाम में प्रविष्ट थी । वस्तुतः, प्रतिवादियों के अभिवचनों के अनुसार, सहायक पूर्त आयुक्त, लातूर के समक्ष एक परिवर्तित रिपोर्ट फाइल की गई थी और उक्त प्राधिकारी ने ईनामदारों/मुतवल्लियों को नोटिस जारी किए बिना तारीख 29 जनवरी, 1973 को उक्त आवेदन मंजूर कर लिया था । वादियों को इस आवेदन की कोई जानकारी नहीं थी किन्तु, इस आदेश के आधार पर सरकार ने ट्रस्ट को भूमि का कब्जा सौंप दिया था । इसके पश्चात् ही भूमि, ट्रस्ट के कब्जे में आया था और ट्रस्ट के पक्ष में नामांतरण प्रविष्टि (प्रदर्श सं. 115) की गई थी । वादियों के अनुसार, उन्हें इस तथ्य के बारे में जानकारी वर्ष 1986 के पश्चात् ही हुई जब इस संबंध में कुछ प्रकाशन, बाम्बे पब्लिक ट्रस्ट ऐक्ट, 1950 की धारा 50ए के निबंधनों में सहायक पूर्त आयुक्त द्वारा प्रकाशित किए गए थे । यह वादी ही थे, जैसा कि जिला न्यायाधीश के साथ ही उच्च न्यायालय द्वारा मत व्यक्त किया गया था, जिन्होंने यह साबित किया था कि वाद भूमि दरगाह से संबंधित है । उच्च न्यायालय के अनुसार, वादी वास्तविक तौर पर ईनामदार नहीं थे और वे मुतवल्लियों के रूप में दरगाह से संबंधित कार्य कर रहे थे । वादियों द्वारा यह दर्शित करने के लिए साक्ष्य प्रस्तुत किया गया था कि उन्हें हैदराबाद अतियात इंक्वारिज ऐक्ट, 1952 के अधीन सक्षम प्राधिकारी द्वारा दरगाह के मूल मुतवल्ली निजामुद्दीन के उत्तराधिकारियों के रूप में अभिनिर्धारित किए गए थे । उच्च न्यायालय ने वादियों द्वारा साबित वर्ष 1915 से आगे की कई दस्तावेजी अभिलेखों के प्रतिनिर्देश किया जो यह दर्शित करते थे कि भूमि को बहुत पहले वर्ष 1915 में दरगाह को दिया गया था । इसलिए, दरगाह को अभिलेखीय दस्तावेजों में बहुत पहले 1325 फसली (1915 ईशा पश्चात्) में स्वामी दर्शित किया गया था । इसी प्रकार की प्रविष्टियां 1342 फसली (1932 ईशा पश्चात्), 1943 और 1951 में की गई थी, सभी दस्तावेजें यह दर्शित करती हैं कि

भूमियां, दरगाह से संबंधित भूमियों के रूप में दर्शित की गई थीं । जिला न्यायालय और उच्च न्यायालय के निर्णय साक्ष्य पर आधारित है । जहां तक भूमि के स्वामित्व का संबंध है, के बारे में विधि का कोई प्रश्न उद्भूत नहीं होता है । इसलिए, तथ्य के इस निष्कर्ष में हस्तक्षेप अपेक्षित नहीं है । न्यायालय के मत में, पूर्वोक्त निर्णय से अपीलार्थियों को कोई सहायता नहीं मिलती है वास्तव में, यह प्रत्यर्थियों की सहायता करता है । निर्णय में स्पष्टत: यह अधिकथित है कि दावाकृत या प्रार्थना की गई लघु अनुतोष या अल्प अनुतोष को मंजूर किया जा सकता है । वादियों ने ईनामदारों की प्रास्थिति का दावा किया है जो मुतवल्लियों के मुकाबले उच्चतर प्रास्थिति है । उच्च न्यायालय, लघु या अल्प अनुतोष मंजूर करता है न कि उच्चतर अनुतोष या पूर्णतया नया अनुतोष मंजूर करता है और इसलिए, हम इस दलील को नामंजूर करते हैं । यह भी तर्क दिया गया कि सिविल न्यायालय के पास वाद का विनिश्चय करने की अधिकारिता नहीं थी । इस प्रकार का कोई आक्षेप विचारण न्यायालय के समक्ष उद्भूत नहीं किया गया था । यह आक्षेप उच्च न्यायालय के समक्ष उद्भूत किया गया था किन्तु इसे सही ही नामंजूर कर दिया गया था । इस मामले में, यह विवाद्यक कि क्या संपत्तियां, दरगाह की संपत्तियां थीं या नहीं और न कि यह विवाद्यक था कि संपत्तियां, वक्फ की संपत्तियां थीं या नहीं । उच्च न्यायालय ने यह सही ही अभिनिर्धारित किया है कि वादियों ने भूमि में कोई वैयक्तिक अधिकार का दावा नहीं किया था अपितु, मात्र दरगाह की संपत्ति पर प्रबंधन के अधिकारों का दावा किया था । न्यायालय, उच्च न्यायालय के इस निष्कर्ष से सहमत है कि सिविल न्यायालय के पास वाद विनिश्चय करने की अधिकारिता थी । इस प्रक्रम पर, यह इंगित करना समुचित होगा कि अपीलार्थियों/प्रतिवादियों ने इस अपील के दौरान कतिपय उन दस्तावेजों को अभिलेख पर प्रस्तुत करने के लिए कई आवेदन फाइल किए हैं जो विचारण न्यायालय के अभिलेख पर नहीं थे । इन आवेदनों में से किसी भी आवेदन में इस बात का स्पष्टीकरण नहीं दिया गया है कि क्यों इन दस्तावेजों को विचारण न्यायालय के समक्ष फाइल नहीं किया गया था । इस प्रक्रम पर, इन दस्तावेजों पर विचार नहीं किया जा सकता है और इन्हें ग्रहण नहीं किया जा सकता है । प्रतिवादियों ने इन दस्तावेजों को

विचारण न्यायालय के समक्ष फाइल नहीं किया था । प्रथम अपील न्यायालय के समक्ष अथवा उच्च न्यायालय के समक्ष भी अतिरिक्त साक्ष्य प्रस्तुत करने के लिए सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश 41 के नियम 27 के अधीन कोई आवेदन फाइल नहीं किया गया था । न्यायालय के समक्ष फाइल आवेदनों में भी इन दस्तावेजों को पूर्ववर्ती में फाइल नहीं करने के लिए कोई कारण निर्दिष्ट नहीं किया गया है और ये सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश 41 के नियम 27 की अपेक्षाओं को पूरी नहीं करता है । अतएव, आवेदन नामंजूर किए जाते हैं और दस्तावेजों पर विचार नहीं किया जा सकता है । (पैरा 8, 11, 12 और 13)

निर्दिष्ट निर्णय

पैरा

[2016] (2016) 1 एस. सी. सी. 332 :
एल. सी. हनुमनथप्पा बनाम **एच. बी. शिवकुमार** ; 9

[2008] (2008) 17 एस. सी. सी. 491 :
बछज नाहर बनाम **निलिमा मंडल** । 10

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2007 की सिविल अपील सं. 4478.

संविधान, 1950 के अनुच्छेद 133 के अधीन अपील ।

अपीलार्थियों की ओर से सर्वश्री विवेक सी. साल्शे और अमोल बी. करांडे, अधिवक्तागण

प्रत्यर्थियों की ओर से सर्वश्री युवराज गायकवाड़, (डा.) आर. आर. देशपांडे, अंजनी कुमार झा, सुधांशु एस. चौधरी, (सुश्री) सुरभि गुलेरिया, योगेश कोल्टे, वात्सल्य विज्ञा, (सुश्री) नंदनी सिंगला, शकील अहमद सईद, मोहम्मद परवेज दबास, दानिश अहमद सईद, उज्जमी जमील हुसैन, अधिवक्तगण

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति दीपक गुप्ता ने दिया ।

न्या. गुप्ता – इसमें के प्रत्यर्थी सं. 1 से 4 द्वारा एक वाद विचारण न्यायालय के समक्ष वर्तमान अपीलार्थियों और अन्यों के विरुद्ध फाइल की गई थी जिसमें निम्नलिखित मुख्य प्रार्थनाएं की गई थीं :–

> "(i) कि ग्राम हरेगांव, ताल्लुक औसा, जिला लातूर में स्थित क्रमशः भूमि क्रम सं. 60, 62, 77, 79/2 और 78 माप 31 एकड़ 32 गुंटाज, 15 एकड़ 22 गुंटाज, 27 एकड़ 18 गुंटाज, 15 एकड़ 19 गुंटाज और 9 एकड़ 19 गुंटाज भूमियों को नियामतुल्लाह शाह दरगाह हरेगांव की ईनाम भूमियों और वादियों को उपर्युक्त भूमियों का ईनामदार के रूप में घोषित किया जाए ।
>
> (ii) कि प्रतिवादी सं. 1 से 11 से उपर्युक्त निर्दिष्ट भूमियों को लेकर वादियों के कब्जे में रखा जाए ।"

2. वर्तमान अपीलार्थियों और अन्यों ने वाद का विरोध किया । वादियों के अनुसार, सरकार द्वारा तारीख 19 अगस्त, 1978 को प्रश्नगत भूमि का कब्जा नामदेव देवोस्थान ट्रस्ट (संक्षेप में जिस 'ट्रस्ट' कहा गया है) को अवैध तौर पर दिया गया था और यह प्रार्थना की गई कि इस भूमि का कब्जा वादियों को वापस दिया जाए । प्रतिवादियों ने कतिपय आधारों पर वाद का विरोध किया । मुख्य आधारों में से एक आधार यह उद्भूत किया था कि वाद को परिसीमा अवधि के भीतर फाइल नहीं किया गया था । यह भी दलील दी गई थी कि वाद, आवश्यक पक्षकारों के असंयोजन के कारण दूषित था और यह दलील दी गई कि वाद भूमि अति प्राचीन काल से ट्रस्ट से संबंधित है और वाद खारिज किए जाने योग्य है । विचारण न्यायालय ने तारीख 14 अक्तूबर, 1992 के निर्णय द्वारा वादियों का वाद खारिज कर दिया था और यह अभिनिर्धारित किया था कि वाद को परिसीमा अवधि के भीतर फाइल नहीं किया गया है । यह भी अभिनिर्धारित किया था कि वाद, पक्षकारों के असंयोजन के कारण दूषित है । अंततः, विचारण न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया था कि वादी यह साबित करने में असफल रहे हैं कि वाद भूमि, इनाम भूमि है या वादी ईनामदार हैं ।

3. व्यथित होकर, वादियों ने जिला न्यायाधीश लातूर के न्यायालय में एक अपील फाइल की । जिला न्यायाधीश ने तारीख 26 नवम्बर, 1997 के निर्णय द्वारा विचारण न्यायालय के निर्णय और डिक्री को उलट दिया और यह निष्कर्ष निकाला कि भूमि मौलिक तौर पर, दरगाह नियामतुल्लाह शाह कादरी (जिसे संक्षेप में 'दरगाह' कहा गया है) से संबंधित है और वादी तथा प्रतिवादी सं. 12, वाद भूमि के नामदार हैं । यह भी अभिनिर्धारित किया कि सरकार ने गलत तौर पर वाद संपत्ति का कब्जा दिया था । यह भी अभिनिर्धारित किया कि सभी आवश्यक पक्षकार वाद में सम्मिलित थे । अंततः, प्रथम अपील न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि वादी, वाद भूमि के कब्जे की डिक्री पाने के हकदार हैं और तद्नुसार, अपील मंजूर कर लिया तथा वादियों और प्रतिवादी सं. 12 के पक्ष में तथा प्रतिवादी सं. 1 से 11 और 15 के विरुद्ध वाद डिक्री कर दिया ।

4. व्यथित होकर, वर्तमान अपीलार्थियों और दो अन्यों ने बाम्बे उच्च न्यायालय के समक्ष अपील फाइल की । यह अपील, तारीख 29 मार्च, 2007 के निर्णय द्वारा खारिज कर दी गई थी । तथापि, उच्च न्यायालय ने जिला न्यायाधीश के निर्णय को इस सीमा तक उपांतरित कर दिया कि वादी और प्रतिवादी सं. 12, मुतवल्लियों के वंशज थे न कि ईनामदार थे । अतएव, यह अपील फाइल की गई ।

5. हमने, पक्षकारों के विद्वान् काउंसेल को सुना ।

6. यह अपील लंबित रहने के दौरान, वादियों में से कुछ वादी की मृत्यु हो गई और उनके विधिक प्रतिनिधियों को अभिलेख पर लाया गया । यद्यपि, प्रारंभिक आक्षेप यह उद्भूत किया गया था कि अपील का संपूर्ण रूप से उपशमन हो गया था, हम, इस प्रारंभिक आक्षेप में कोई गुणागुण नहीं पाते हैं । वादी उन संपत्तियों के मुतवल्लियों के वंशज अभिनिर्धारित किए गए थे जो स्वाभाविक रूप से प्रबंधकीय पद है । इस प्रकार, अपील का उपशमन नहीं हुआ था ।

7. अपीलार्थियों के विद्वान् काउंसेल ने यह निवेदन किया कि वादी यह साबित करने में असफल रहे कि भूमि, दरगाह की भूमि थी ।

द्वितीय निवेदन यह किया गया कि वाद, परिसीमा अवधि द्वारा वर्जित था । यह भी दलील दी गई कि वाद, कायम रखे जाने योग्य नहीं था और यह कि उच्च न्यायालय ने ऐसा अनुतोष मंजूर किया था जिनकी वादियों द्वारा प्रार्थना नहीं की गई थी ।

8. जहां तक, हक के विवाद्यक का संबंध है, हमारा मत यह है कि जिला न्यायाधीश द्वारा तथ्य के निष्कर्ष निकाले गए थे और उसकी पुष्टि उच्च न्यायालय द्वारा की गई थी । इस निष्कर्ष को इस न्यायालय में विवादित नहीं किया जा सकता है । तथापि, अपीलार्थियों के विद्वान् काउंसेल के जोर देने पर, हमने अभिलेखों का परिशीलन किया और यह पाया कि प्रश्नगत भूमि का कब्जा, तारीख 19 अगस्त, 1978 को ही ट्रस्ट को सौंपा गया था । यह दर्शित करने के लिए अभिलेख पर कुछ नहीं लाया गया है कि तारीख 29 जनवरी, 1973 के पूर्व भूमि, ट्रस्ट के नाम में प्रविष्ट थी । वस्तुत:, प्रतिवादियों के अभिवचनों के अनुसार, सहायक पूर्त आयुक्त, लातूर के समक्ष एक परिवर्तित रिपोर्ट फाइल की गई थी और उक्त प्राधिकारी ने ईनामदारों/मुतवल्लियों को नोटिस जारी किए बिना तारीख 29 जनवरी, 1973 को उक्त आवेदन मंजूर कर लिया था । वादियों को इस आवेदन की कोई जानकारी नहीं थी किन्तु, इस आदेश के आधार पर सरकार ने ट्रस्ट को भूमि का कब्जा सौंप दिया था । इसके पश्चात् ही भूमि, ट्रस्ट के कब्जे में आया था और ट्रस्ट के पक्ष में नामांतरण प्रविष्टि (प्रदर्श सं. 115) की गई थी । वादियों के अनुसार, उन्हें इस तथ्य के बारे में जानकारी वर्ष 1986 के पश्चात् ही हुई जब इस संबंध में कुछ प्रकाशन, बाम्बे पब्लिक ट्रस्ट ऐक्ट, 1950 की धारा 50ए के निबंधनों में सहायक पूर्त आयुक्त द्वारा प्रकाशित किए गए थे । यह वादी ही थे, जैसा कि जिला न्यायाधीश के साथ ही उच्च न्यायालय द्वारा मत व्यक्त किया गया था, जिन्होंने यह साबित किया था कि वाद भूमि दरगाह से संबंधित है । उच्च न्यायालय के अनुसार, वादी वास्तविक तौर पर ईनामदार नहीं थे और वे मुतवल्लियों के रूप में दरगाह से संबंधित कार्य कर रहे थे । वादियों द्वारा यह दर्शित करने के लिए साक्ष्य प्रस्तुत किया गया था कि उन्हें हैदराबाद अतियात इंक्वारिज ऐक्ट, 1952 के अधीन सक्षम

प्राधिकारी द्वारा दरगाह के मूल मुतवल्ली निजामुद्दीन के उत्तराधिकारियों के रूप में अभिनिर्धारित किए गए थे । उच्च न्यायालय ने वादियों द्वारा साबित वर्ष 1915 से आगे की कई दस्तावेजी अभिलेखों के प्रतिनिर्देश किया जो यह दर्शित करते थे कि भूमि को बहुत पहले वर्ष 1915 में दरगाह को दिया गया था । इसलिए, दरगाह को अभिलेखीय दस्तावेजों में बहुत पहले 1325 फसली (1915 ईशा पश्चात्) में स्वामी दर्शित किया गया था । इसी प्रकार की प्रविष्टियां 1342 फसली (1932 ईशा पश्चात्), 1943 और 1951 में की गई थी, सभी दस्तावेजें यह दर्शित करती हैं कि भूमियां, दरगाह से संबंधित भूमियों के रूप में दर्शित की गई थीं । जिला न्यायालय और उच्च न्यायालय के निर्णय साक्ष्य पर आधारित हैं । जहां तक भूमि के स्वामित्व का संबंध है, के बारे में विधि का कोई प्रश्न उद्भूत नहीं होता है । इसलिए, तथ्य के इस निष्कर्ष में हस्तक्षेप अपेक्षित नहीं है ।

9. विद्वान् काउंसेल द्वारा अगली दलील यह दी गई थी कि वाद, परिसीमा अवधि के भीतर फाइल नहीं की गई थी । यह आक्षेप, पूर्णतया असमर्थनीय है । स्वीकृततः, भूमि का कब्जा, वर्ष 1978 में ही ट्रस्ट को सौंपा गया था । अपीलार्थियों ने यह दलील दी कि वाद फाइल करने के लिए परिसीमा अवधि तीन वर्षों की है क्योंकि वाद, घोषणा के लिए है । हमारा यह मत है कि यह दलील नामंजूर किए जाने योग्य है । हमने इसमें उपर्युक्त वाद में किए गए मुख्य प्रार्थनाओं पर विचार किया है जिनसे स्पष्टतः यह उपदर्शित होता है कि यह वाद न केवल घोषणा कराने के लिए अपितु, वादियों ने वाद भूमि पर कब्जे के लिए प्रार्थना भी की है । हक के आधार पर कब्जे के लिए वाद फाइल करने की परिसीमा अवधि 12 वर्ष है और इसलिए, वाद परिसीमा अवधि के भीतर है । मात्र इस कारण से कि अनुतोषों में से एक अनुतोष घोषणा कराने के लिए ईप्सित है जिसका अभिप्राय यह नहीं होगा कि 12 वर्षों की परिसीमा अवधि के अधिकार को खो दिया गया है । **एल. सी. हनुमनथप्पा** बनाम **एच. बी. शिवकुमार**[1] वाले मामले में, इस न्यायालय के निर्णय का अपीलार्थियों के विद्वान् काउंसेल द्वारा लिया गया अवलंब पूर्णतया

---

[1] (2016) 1 एस. सी. सी. 332.

अनुचित है । उक्त निर्णय लागू नहीं होता है क्योंकि उक्त मामला स्वीकृततः, मात्र घोषणा के लिए था और न कि वाद, दोनों घोषणा और कब्जे के लिए था । हक के आधार पर कब्जे के लिए फाइल वाद में, वादी अपने हक को साबित करने के लिए आबद्ध है और यह घोषणा करने के लिए प्रार्थना करता है कि वह वाद भूमि का स्वामी है क्योंकि हक के आधार पर उसका वाद तब तक सफल नहीं हो सकता है जब तक कि भूमि के ऊपर उसका कुछ हक अभिनिर्धारित नहीं कर दिया जाता है । तथापि, मुख्य अनुतोष कब्जे का है और इसलिए वाद, परिसीमा अधिनियम, 1963 की धारा 65 द्वारा शासित होगा । यह धारा अचल संपत्ति के कब्जे के लिए वाद अथवा हक पर आधारित उसमें कोई हित के बारे में विचार करती है और उसकी परिसीमा अवधि उस तारीख से 12 वर्ष है जब से भूमि का कब्जा वादी के प्रतिकूल हो गया है । वर्तमान मामले में, यद्यपि, प्रतिवादियों के पक्षकथन पर गंभीरतापूर्वक विचार किया गया है फिर भी प्रतिवादियों का कब्जा तारीख 19 अगस्त, 1978 को ही वादियों के प्रतिकूल हुआ था जब कब्जा प्रतिवादियों को सौंपा गया था । इसलिए, अपीलार्थियों के इस दलील में कोई गुणागुण नहीं है ।

10. यह भी तर्क दिया गया कि वादियों ने यह प्रार्थना की थी कि वे ईनामदार हैं और यह कि उच्च न्यायालय ने वादियों को मुतवल्लियों घोषित करते हुए, एक नया मामला सृजित किया था । यह तर्क दिया गया कि चूंकि वादियों ने इस अनुतोष का दावा नहीं किया था कि वे मुतवल्ली हैं, इसलिए, उच्च न्यायालय यह अनुतोष मंजूर नहीं कर सकता था । **बछज नाहर** बनाम **निलिमा मंडल**[1] वाले मामले में, इस न्यायालय के निर्णय का अवलंब लिया गया है । उक्त निर्णय का पैरा 22 निम्नलिखित है :–

> "22. उच्च न्यायालय का यह मत कि जब वादी ने तथ्यों का कथन कर दिया है और वाद में विशिष्ट अनुतोष के लिए प्रार्थना करता है तो उससे मात्र यह सुझाव मिलता है कि उसे क्या अनुतोष चाहिए और यह कि यह न्यायालय के विवेक पर निर्भर होता है कि

---

[1] (2008) 17 एस. सी. सी. 491.

वह विधि के दृष्टिकोण से उस अनुतोष पर विनिश्चय करना चाहिए कि उसे क्या मंजूर करना चाहिए, यह ठीक नहीं है । इस प्रकार की मताभिव्यक्ति रिट कार्यवाहियों के संदर्भ में समुचित हो सकती है । सिविल वाद में, अनुतोष, लघु या अल्प जिस भी प्रकार का दावा किया गया है, को मंजूर करते समय यह समुचित हो सकता है । किन्तु उक्त मताभिव्यक्ति भ्रांतिपूर्ण है, यदि, इसका अभिप्राय यह अभिनिर्धारित किया जाता है कि सिविल न्यायालय प्रार्थना की अवहेलना करते हुए, कोई भी अनुतोष मंजूर कर सकता है जैसा कि वह ठीक समझता है ।

(रेखांकन जोर देने के लिए किया गया है)

11. हमारे मत में, पूर्वोक्त निर्णय से अपीलार्थियों को कोई सहायता नहीं मिलती है वास्तव में, यह प्रत्यर्थियों की सहायता करता है । निर्णय में स्पष्टत: यह अधिकथित है कि दावाकृत या प्रार्थना की गई लघु अनुतोष या अल्प अनुतोष को मंजूर किया जा सकता है । वादियों ने ईनामदारों की प्रास्थिति का दावा किया है जो मुतवल्लियों के मुकाबले उच्चतर प्रास्थिति है । उच्च न्यायालय, लघु या अल्प अनुतोष मंजूर करता है न कि उच्चतर अनुतोष या पूर्णतया नया अनुतोष मंजूर करता है और इसलिए, हम इस दलील को नामंजूर करते हैं ।

12. यह भी तर्क दिया गया कि सिविल न्यायालय के पास वाद का विनिश्चय करने की अधिकारिता नहीं थी । इस प्रकार का कोई आक्षेप विचारण न्यायालय के समक्ष उद्भूत नहीं किया गया था । यह आक्षेप उच्च न्यायालय के समक्ष उद्भूत किया गया था किन्तु इसे सही ही नामंजूर कर दिया गया था । इस मामले में, यह विवाद्यक कि क्या संपत्तियां, दरगाह की संपत्तियां थीं या नहीं और न कि यह विवाद्यक था कि संपत्तियां, वक्फ की संपत्तियां थीं या नहीं । उच्च न्यायालय ने यह सही ही अभिनिर्धारित किया है कि वादियों ने भूमि में कोई वैयक्तिक अधिकार का दावा नहीं किया था अपितु, मात्र दरगाह की संपत्ति पर प्रबंधन के अधिकारों का दावा किया था । हम, उच्च न्यायालय के इस निष्कर्ष से सहमत हैं कि सिविल न्यायालय के पास वाद विनिश्चय करने की अधिकारिता थी ।

13. इस प्रक्रम पर, यह इंगित करना समुचित होगा कि अपीलार्थियों/प्रतिवादियों ने इस अपील के दौरान कतिपय उन दस्तावेजों को अभिलेख पर प्रस्तुत करने के लिए कई आवेदन फाइल किए हैं जो विचारण न्यायालय के अभिलेख पर नहीं थे । इन आवेदनों में से किसी भी आवेदन में इस बात का स्पष्टीकरण नहीं दिया गया है कि क्यों इन दस्तावेजों को विचारण न्यायालय के समक्ष फाइल नहीं किया गया था । इस प्रक्रम पर, इन दस्तावेजों पर विचार नहीं किया जा सकता है और इन्हें ग्रहण नहीं किया जा सकता है । प्रतिवादियों ने इन दस्तावेजों को विचारण न्यायालय के समक्ष फाइल नहीं किया था । प्रथम अपील न्यायालय के समक्ष अथवा उच्च न्यायालय के समक्ष भी अतिरिक्त साक्ष्य प्रस्तुत करने के लिए सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश 41 के नियम 27 के अधीन कोई आवेदन फाइल नहीं किया गया था । हमारे समक्ष फाइल आवेदनों में भी इन दस्तावेजों को पूर्ववर्ती में फाइल नहीं करने के लिए कोई कारण निर्दिष्ट नहीं किए गए हैं और ये सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश 41 के नियम 27 की अपेक्षाओं को पूरा नहीं करते हैं । अतएव, आवेदन नामंजूर किए जाते हैं और दस्तावेजों पर विचार नहीं किया जा सकता है ।

14. उपर्युक्त चर्चा को ध्यान में रखते हुए, हम अपील में कोई गुणागुण नहीं पाते हैं और इसे खारिज करते हैं । लंबित आवेदन (आवेदनों), यदि कोई हों, को भी निपटाया जाता है ।

अपील खारिज की गई ।

क.